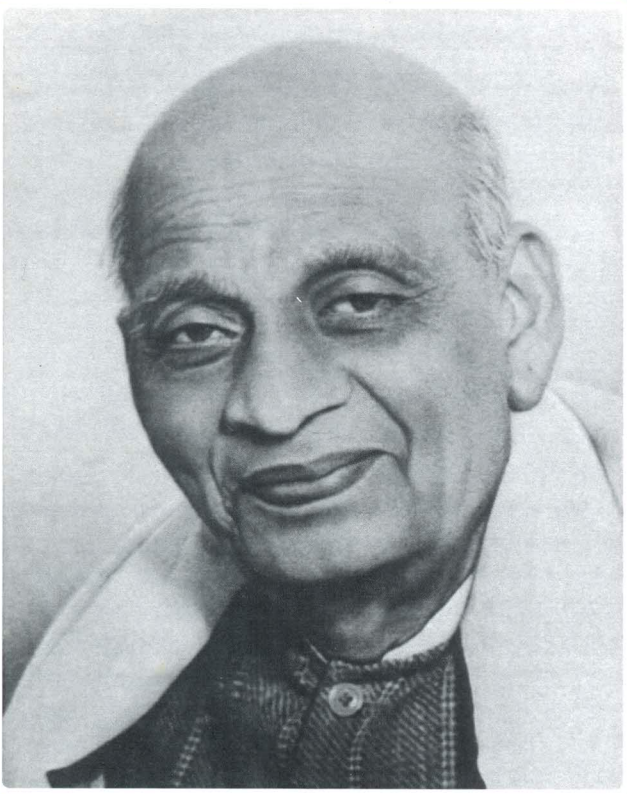

सरदार वल्लभभाई पटेल

लोक सभा सचिवालय
नई दिल्ली
2019

सरदार वल्लभभाई पटेल

स्वतंत्र भारत को एकता व अखंडता के सूत्र में बांधने वाले वल्लभभाई पटेल का जन्म 31 अक्तूबर 1875 को नाडियाड, गुजरात के एक किसान परिवार में हुआ था। उनके पिता झावेरभाई, करमसद के निवासी थे और अत्यन्त धार्मिक प्रवृत्ति तथा देशभक्ति से ओतप्रोत एक मध्यमवर्गीय किसान थे। कहा जाता है कि उन्होंने 1857 के स्वतंत्रता संग्राम में भाग लिया था। उनकी माता लाडबाई धार्मिक विचारों वाली एक सरल एवं कर्मठ महिला थीं। उन्होंने किशोर वल्लभ में स्वावलम्बन, परिश्रम तथा आत्मसंयम के गुणों को कूट-कूट कर भरा था।

सत्रह वर्ष की आयु तक वल्लभ अपने पिता के साथ रहे, वे उनके साथ खेतों में जाते थे, महीने में दो बार उपवास रखते थे तथा उन्होंने गांव के स्थानीय स्कूल में अपनी मातृभाषा में प्रारम्भिक शिक्षा प्राप्त की। आगे अध्ययन के लिए वल्लभभाई नाडियाड चले गए जहां उन्होंने वर्ष 1897 में नाडियाड हाई स्कूल से अपनी मैट्रिक की परीक्षा उत्तीर्ण की।

छात्र के रूप में वल्लभभाई पहले ही अपने लिए वकालत के व्यवसाय का मन बना चुके थे किन्तु चूंकि वह विश्वविद्यालय शिक्षा के व्यय को वहन करने में असमर्थ थे, अत: उन्होंने प्रारंभ में 'डिस्ट्रिक्ट प्लीडर' बनने का निर्णय लिया। उन्होंने स्थानीय प्लीडर की परीक्षा शीघ्र ही उत्तीर्ण कर ली और जिला न्यायालय में प्लीडर के रूप में अपनी वकालत आरंभ कर दी। इस दौरान, जब वल्लभ अपनी किशोरावस्था में ही थे, उनके माता-पिता ने जावेरबाई के साथ उनका विवाह पक्का कर दिया। उनकी गहरी समझ-बूझ, निर्भीकता, दूरदृष्टि, शान्त प्रकृति और मानव स्वभाव की समझ ने उन्हें अपने व्यवसाय में पर्याप्त सहायता प्रदान की।

वर्ष 1908 के आखिरी दिनों में वल्लभभाई की पत्नी बीमार पड़ गईं और एक अपरिहार्य 'सर्जिकल ऑपरेशन' के लिए उन्हें बम्बई* ले जाना पड़ा। तथापि, ऑपरेशन के पश्चात् सन् 1909 में उनकी मृत्यु हो गई। अपनी पत्नी की मृत्यु के समय श्री वल्लभभाई की उम्र केवल 33 वर्ष थी और उस समय उनके दो बच्चे थे-- मणिबेन नामक पुत्री, जिसका जन्म अप्रैल 1904 में हुआ था तथा दह्याभाई नामक पुत्र, जिसका जन्म नवम्बर 1905 में हुआ था।

वल्लभभाई कानून की आगे की पढ़ाई करने के लिए 1910 में इंग्लैंड चले गए। 'मिडिल टेम्पल' से उन्होंने रोमन लॉ परीक्षा प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण की। पुन: जून 1912 में अंतिम परीक्षा में वह प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण हुए जिस पर उन्हें 50 पौंड का पुरस्कार मिला। 'मिडिल टेम्पल' में अपना

*अब मुम्बई कहा जाता है।

अध्ययन-सत्र पूरा करने के पश्चात् वल्लभभाई को नए बैरिस्टर पंजीकरण समारोह में सम्मानित किया गया और "विशेष योग्यता सहित" अपनी परीक्षा उत्तीर्ण करने के लिए उनका नाम मेधावी छात्रों की तालिका में दर्ज किया गया।

दिनांक 13 फरवरी 1913 को भारत पहुंचने पर वल्लभभाई एक स्वतंत्र जीवन जीना चाहते थे, इसलिए उन्होंने अहमदाबाद में बैरिस्टर के रूप में वकालत का पेशा चुना। वकील के रूप में भी वल्लभभाई ने बड़ी निर्भीकता का परिचय दिया। वल्लभभाई 1919 के अंत तक वकालत के व्यवसाय में सक्रिय रहे और इसके बाद वह सार्वजनिक जीवन में अधिकाधिक व्यस्त होते चले गए।

अहमदाबाद के नगर प्रशासन के कारण वल्लभभाई का ध्यान पहली बार सार्वजनिक कार्य की ओर आकर्षित हुआ। अहमदाबाद का पहला आयुक्त मि. शिलिडी एक अक्खड़ तथा जिद्दी किस्म का आदमी था। आयुक्त के कुप्रशासन के परिणामस्वरूप अहमदाबाद की जनता में असंतोष फैल गया। उस स्थिति में सुधार करने के लिए एक प्रभावशाली एवं समर्थ व्यक्ति की अत्यंत आवश्यकता थी। अन्ततः वल्लभभाई ने स्वयं नगर परिषद् का चुनाव लड़ने का फैसला किया जिसके लिए वह निर्विरोध चुन लिये गये। वल्लभभाई ने नगरपालिका के अधिकारियों की अक्षमता और उदासीनता के विरुद्ध संघर्ष किया और इस प्रकार धीरे-धीरे स्थानीय प्रशासन को नगर के निवासियों के लिए सक्षम एवं उनकी जरूरतें पूरा करने वाला बना दिया।

वर्ष 1917 में वह उस समय गांधीजी की ओर आकर्षित हुए जब गांधीजी ने चम्पारण की चुनौती स्वीकार कर ली थी और बिहार में नील की खेती करने वाले किसानों की तकलीफें बहुत हद तक दूर की जा चुकी थीं। उन्होंने गुजरात के पहले राजनीतिक सम्मेलन में उत्साहपूर्वक भाग लिया, बेगार प्रथा की निन्दा की और इस बुराई को समाप्त करने का निर्णय लिया तथा गुजरात सभा का सचिव पद स्वीकार कर लिया। वर्ष 1918 में उन्होंने विलासिता, वैभव और ख्यातिपूर्ण जीवन का परित्याग करके गांधीजी के त्याग, सादगी और जनसेवा के मार्ग का अनुसरण किया।

वल्लभभाई को अहिंसा के अमोघ अस्त्र 'सत्याग्रह' का पाठ किसी और ने नहीं, बल्कि स्वयं बापू ने पढ़ाया। गुजरात के खेड़ा जिले में भयंकर अकाल पड़ा, जहां भारी वर्षा होने के कारण किसान अपनी भूमि से एक वर्ष तक कुछ भी प्राप्त नहीं कर सके और उनकी फसलें वर्षा में बह गईं। ब्रिटिश सरकार जिसका किसानों के प्रति रवैया बड़ा सख्त था, ने हमेशा की तरह किसानों की दुर्दशा के प्रति कोई सहानुभूति नहीं दिखाई, बल्कि वह उन पर पड़ी विपत्ति के बावजूद उनसे हर हाल में भू-राजस्व वसूल करना चाहती थी। वल्लभभाई ने इस कार्य में अपनी सेवाएं अर्पित कीं और गांधीजी के नेतृत्व में किसानों का एक आंदोलन शुरू किया जिसने सत्याग्रह का रूप ले लिया, इसके अंतर्गत एक ओर तो उन्होंने कर देने से मना किया तथा दूसरी ओर अधिकारियों से किसानों की दुर्दशा पर विचार करने और उनकी सम्पत्तियों को जब्त करके उन्हें परेशान न करने का अनुरोध किया। सत्ता के साथ लम्बे अर्से तक संघर्ष करने के बाद अंततः यह अभियान सफल हुआ और खेड़ा जिले के कलेक्टर ने किसानों को तंग न करने और उन्हें राहत

देने के गांधीजी के प्रस्ताव को स्वीकार कर लिया। इसके बाद ही वल्लभभाई ने अपना सारा ध्यान जनसेवा में लगाने का प्रण लिया और गांधीजी की सलाह पर अपने पश्चिमी शैली के कपड़ों का भी त्याग कर दिया।

वर्ष 1919 में जब रौलट एक्ट पारित किया गया तो वल्लभभाई के नेतृत्व में अहमदाबाद शहर इसके विरोध में उठ खड़ा हुआ। बड़े-बड़े जुलूस निकाले गए और "हिन्द", "स्वराज" और "सर्वोदय" जैसी पत्रिकाएं खुले आम बेची गईं। 'सत्याग्रह बुलेटिन' का प्रकाशन किया गया। अव्यवस्था के दौरान कई लोगों को बिना किसी कारण नजरबंद कर दिया गया। वल्लभभाई ने उनकी पैरवी की और उन्हें छुड़वाया।

सरकार जनता की स्वतंत्रता की मांग का हर सम्भव तरीके से दमन कर रही थी। इसके बदले में गांधीजी ने अहिंसा पर आधारित असहयोग की बात कही। दिनांक 11 जुलाई 1920 को वल्लभभाई के कहने पर गुजरात राजनीतिक सम्मेलन में असहयोग आंदोलन का समर्थन करते हुए एक संकल्प पारित किया गया। वर्ष 1921 में वह नवगठित गुजरात प्रादेशिक कांग्रेस समिति के अध्यक्ष चुने गए।

चौरी-चौरा कांड और गांधीजी द्वारा सविनय अवज्ञा आंदोलन को समाप्त करने और उनकी गिरफ्तारी के बाद जहां तक गुजरात का संबंध था, वहां के कार्य की जिम्मेदारी वल्लभभाई के कंधों पर आ पड़ी। वल्लभभाई ने इस बारे में दृढ़ संकल्प लिया कि गुजरात में गांधीजी के कार्यक्रम को चलाया जाएगा। उन्होंने दस लाख रुपए एकत्र करके गुजरात विद्यापीठ की स्थापना की।

वर्ष 1922-23 और उसके बाद सार्वजनिक स्थलों पर यूनियन जैक के स्थान पर राष्ट्रीय झंडा फहराने के प्रश्न को महत्व दिया जाने लगा क्योंकि तत्कालीन सरकार इसकी अनुमति नहीं देती थी। सरकार के इस आदेश के विरोध में आंदोलन शुरू हो गया। सार्वजनिक स्थानों पर सभाओं का आयोजन किया गया। सरकार ने झंडों को जब्त करना शुरू कर दिया और कई नेताओं को जेलों में ठूंस दिया गया। देश में राष्ट्रीय झंडे को सम्मान का दर्जा दिलवाने के संघर्ष का केन्द्र नागपुर था। वल्लभभाई राष्ट्रीय जुलूस में भाग लेने और गिरफ्तार होने के लिए गुजरात से स्वयंसेवकों को भेज रहे थे। अंत में वह संघर्ष का नेतृत्व करने स्वयं नागपुर गए।

परन्तु आन्दोलन जोर पकड़ता गया। अंततः सरकार ने समझौता कर लिया और वल्लभभाई ने स्थानीय सरकार के गृह सदस्य से सिविल लाइन्स से बिना किसी प्रतिबंध के एक झंडा जुलूस निकालने की अनुमति पाने के लिए इस अवसर का उपयोग किया। झंडा-आन्दोलन के संबंध में गिरफ्तार किये गये व्यक्ति भी रिहा कराये जाने थे। इस प्रकार, यह आन्दोलन राष्ट्रहित में समाप्त हुआ और वल्लभभाई विजयी रहे।

वर्ष 1927 में बारदोली में जमीन के लगान का समय-समय पर पुनर्निर्धारण करने के कारण संकट पैदा हुआ, जिसके परिणामस्वरूप मौजूदा दरों में 30 प्रतिशत की मनमानी वृद्धि की गई। जमीन के लगान में की गई अचानक वृद्धि से किसानों को भारी आघात पहुंचा। उन्हें समझ नहीं आ

रहा था कि वे क्या करें। अत: वे वल्लभभाई के पास जा पहुंचे। वल्लभभाई बारदोली पहुंचे और सरकार के लगान वृद्धि के अन्यायपूर्ण निर्णय का शान्तिपूर्ण ढंग से विरोध जारी रखने के लिए आधार तैयार किया।

सरकार ने बढ़ी हुई लगान दर प्राप्त करने के लिए हर संभव प्रयास किये किन्तु कोई लाभ न हुआ। बारदोली के लोग अनुशासित तथा एकजुट थे, अत: सरकार के लिए उनकी संपत्तियां जब्त करने तथा न्यायिक जांच के ऐसे अन्य कार्य करने के आदेशों को लागू करना एक कठिन काम बन गया।

सशक्त सरकार के विरुद्ध कृषकों की इस अनूठी विजय ने समस्त देशवासियों में अहिंसात्मक सत्याग्रह की क्षमता के प्रति एक नया विश्वास भर दिया। इस घटना के बाद से वल्लभभाई को कृषकों का "सरदार" कहा जाने लगा और लोगों द्वारा उन्हें दी गई यह उपाधि स्थायी रूप से उनके नाम के साथ जुड़ गई।

बारदोली में सरदार की उपलब्धि ने उन्हें गांधीजी के बाद दूसरे नम्बर का अखिल भारतीय स्तर का नेता बना दिया। उन्होंने अब गुजरात से बाहर वृहत्तर विषयों पर ध्यान देना आरंभ किया। मार्च 1929 में सरदार ने काठियावाड़ राजनैतिक सम्मेलन की अध्यक्षता की। दिसम्बर 1929 में उन्हें कांग्रेस के लाहौर अधिवेशन की अध्यक्षता सौंपी गई किन्तु सरदार ने 'पूर्ण स्वराज' की प्राप्ति के लिए काम करने की बात कहकर इसे विनम्रता से टाल दिया। वर्ष 1930 में गांधीजी की दांडी यात्रा आरंभ होने से पूर्व सरदार पटेल गिरफ्तार कर लिये गये। अगस्त 1930 में उन्हें दुबारा 3 माह की जेल हुई जिसकी अवधि पूरी होने के बाद दिसम्बर में उन्हें तीसरी बार गिरफ्तार किया गया और 9 महीने के लिए जेल भेज दिया गया। वर्ष 1931 का कांग्रेस अधिवेशन कराची में हुआ और सरदार पटेल उसके अध्यक्ष चुने गये।

जनवरी 1932 से मई 1933 तक येरवडा जेल में अपने कारावास के दौरान उन्होंने अपना समय गांधीजी के साथ बिताया। इस दौरान सरदार ने चाय पीना और धूम्रपान करना छोड़ दिया तथा गीता का अध्ययन किया। इसी विषम काल में उनकी माता लाडबाई और बड़े भाई विठ्ठलभाई का देहान्त हो गया। उन्हें सन् 1934 में अस्वस्थता के कारण बिना शर्त रिहा किया गया। सन् 1937 में सरदार ने प्रान्तीय विधान सभाओं के चुनावों का संचालन किया जिसके फलस्वरूप कांग्रेस 11 में से 7 प्रान्तों में सत्ता में आई। जब भारत को उसकी सहमति के बगैर अक्तूबर 1939 में द्वितीय विश्वयुद्ध में झोंक दिया गया तो मंत्रिमंडल ने त्यागपत्र दे दिया। सन् 1940 में व्यक्तिगत सत्याग्रह चलाया गया और सरदार पटेल को फिर कारागार जाना पड़ा जहां से उन्हें खराब स्वास्थ्य के कारण पुन: 20 अगस्त 1941 को रिहा कर दिया गया। सन् 1942 में उन्होंने सर स्टैफर्ड क्रिप्स से वार्ता की, जो असफल रही। अखिल भारतीय कांग्रेस समिति ने 8 अगस्त 1942 को बम्बई में प्रसिद्ध "भारत छोड़ो" प्रस्ताव पारित किया। एक अत्यन्त महत्वपूर्ण नेता होने के कारण सरदार पटेल को फिर से गिरफ्तार कर लिया गया और जून 1945 में रिहा कर दिया गया।

कांग्रेस ने 1946 में केन्द्र में सत्ता संभाली। सरदार पटेल को अंतरिम सरकार का गृह मंत्री और उप-प्रधानमंत्री बनाया गया। दिनांक 2 जून 1947 को ब्रिटिश सरकार ने घोषणा की कि 15 अगस्त 1947 को सत्ता का हस्तांतरण कर दिया जाएगा।

वर्ष 1946 और 1950 के मध्य उन्होंने गृह मंत्रालय और रियासत मंत्रालय का कार्यभार जो चुनौतियों से भरा था, उत्कृष्ट और अद्वितीय ढंग से संभाला। सरदार पटेल द्वारा देश के लिए किए गए महानतम कार्यों में से एक कार्य देसी रियासतों का भारत संघ में विलय कराना है, जो उन्होंने कारगर ढंग से किया। उन्होंने लगभग छह सौ देसी रियासतों का अत्यंत सफलतापूर्वक और बहुत अल्प अवधि में भारत में विलय कराया। यह सरदार पटेल ही थे जिन्होंने भारत को अराजकता और अव्यवस्था की स्थिति से उबारकर संप्रभु लोकतांत्रिक राष्ट्र के रूप में स्थापित किया। वास्तव में उन्होंने भारत को एक करने का महान कार्य किया।

भारत माता के इस महान और विराट व्यक्तित्व के धनी सपूत को 15 दिसम्बर 1950 को नियति के क्रूर हाथों ने हमसे छीन लिया। भारत ने स्वतंत्र भारत के तीन निर्माताओं में से एक, इस महान नेता को खो दिया। संपूर्ण राष्ट्र शोकाकुल हो गया।

संसद में प्रधान मंत्री नेहरू ने अपने साथी को मर्मस्पर्शी श्रद्धांजलि देते हुए कहा:

"यह एक महान गाथा है जिसे हम जानते हैं, संपूर्ण राष्ट्र जानता है और जिसका इतिहास के अनेक पृष्ठों में वर्णन किया जाएगा और उन्हें नये भारत के "निर्माता और संस्थापक" की संज्ञा दी जाएगी। कई बातें उनके बारे में कही जाएंगी किंतु हममें से अनेक उन्हें स्वतंत्रता संग्राम के एक महान नायक के रूप में सदा याद करेंगे क्योंकि वह एक ऐसे व्यक्ति थे जो संकटकाल में अथवा विजयवेला में सदा ही उचित परामर्श दिया करते थे और जिन पर एक मित्र, एक सहयोगी के रूप में निर्विवाद रूप से भरोसा किया जा सकता था, जिन्होंने हमारे संकट के दिनों में दुविधा में पड़े हुए हमारे हृदयों को पुनर्शक्ति प्रदान की। हम लोग उन्हें एक सच्चे साथी और सहयोगी के रूप में याद करेंगे और मैं तो, जो इस बेंच पर वर्षों से उनके बगल में बैठता था और भी कुछ एकाकी महसूस करूंगा और जब-जब मैं इस खाली सीट को देखूंगा, तब-तब मैं एक रिक्तता का अनुभव करूंगा।"

लॉर्ड माउंटबैटन ने श्रद्धांजलि अर्पित करते हुए कहा:

"उनकी छवि भारत के जनमानस पर सदैव अंकित रहेगी। सन् 1947 और 1948 में रियासत मंत्रालय के प्रभारी के रूप में उनका महान कार्य इतिहास में लिखा जाएगा, क्योंकि उन्होंने रियासतों की समस्या को भली-भाँति समझकर तथा उनके शासकों का पूर्ण सम्मान करते हुए, अत्यंत ही जटिल समस्या का जिस प्रकार समाधान किया वैसा आज तक कोई भी राजनीतिज्ञ नहीं कर पाया था।"

संयुक्त राष्ट्र महासचिव ने कहा:

"पटेल के निधन से भारत ने एक महान नेता और संयुक्त राष्ट्र संघ ने एक शक्तिशाली मित्र खो दिया है।"